International Journal of Hindi Research
www.hindijournal.com
ISSN: 2455-2232
Received: 09-03-2026, Accepted: 09-04-2026, Published: 24-04-2026
Volume 12, Issue 2, 2026, Page No. 89-91

भारतीय भाषाविज्ञान: परंपरा और आधुनिक संदर्भ

डॉ. शिखा माहेश्वरी
असिस्टेंट प्रोफेसर, केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा, उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश
प्रत्येक समाज की भाषा उस समाज की एक सुदीर्घ परंपरा होती है | भाषा एक परंपरागत वस्तु है | भाषा नित परिवर्तनशील होते हुए भी स्थायित्व ग्रहण किए हुए है | भाषा अपने भाषाई समाज में नैसर्गिक एवं अविछिन्न रूप में प्रवाहित होती रहती है | भाषा एवं व्याकरण एक ही सिक्के के दो पहलू हैं | संवाद–विवाद भाषा द्वारा ही संभव हैं | प्रत्येक कालखंड में भाषा से संबंधित कुछ तथ्य पीछे छूट जाते हैं और भाषा नवीन तथ्य ग्रहण कर लेती है |

मूल शब्दः संप्रेषण, वागेंद्रियों, यादृच्छिक, वर्तते, निर्वचन, आदि

भाषा के माध्यम से मनुष्य अपने भावों और विचारों को एक–दूसरे को प्रकट करता है | सामान्यतः वह कोई भी माध्यम 'भाषा' कहा जा सकता है जिसके द्वारा एक मानव अपने विचार दूसरे तक पहुँचा सके, यथा–बोलना, चुटकी बजाना, आँख से इशारा करना आदि | पर भाषा वैज्ञानिक दृष्टि से संकेतों को भाषा की कोटि में नहीं रखा जा सकता | मेरिओ पाई ने 'ग्लॉसरी ऑफ लिंग्विस्टिक टर्मिनोलॉजी' में लिखा है, "भाषा किसी मानवीय जाति अथवा समाज विशेष के सदस्यों के बीच यादृच्छिक व परंपरागत वाचिक प्रतीकों का प्रयोग कर उच्चारण तथा श्रवण अवयवों द्वारा परिचालित संप्रेषण की व्यवस्था है |"[1] भाषा में मुख्य भूमिका श्रवण एवं उच्चारण की होती है | और इन्हीं के माध्यम से संप्रेषण की क्रिया–प्रक्रिया परिचालित होती है | भाषा में एक वक्ता होता है और एक श्रोता होता है | वक्ता अपने भाव और विचार वागेंद्रियों के माध्यम से श्रोता तक संप्रेषित करता है और श्रोता उन्हें श्रवनेंद्रिय से ग्रहण करता है | फिर श्रोता वक्ता बन जाता है और वह अपनी बात श्रोता बन गए वक्ता तक पहुँचाता है | यही संप्रेषण–व्यापार है और यही भाषा का उद्देश्य भी होता है | इसमें मुख्य बात श्रोता और वक्ता की भूमिकाएँ बदलने की है |

भाषा परंपरागत वस्तु है | किसी भी समाज की भाषा उस समाज की सुदीर्घ परंपरा होती है | भाषा परिवर्तनशील होते हुए भी एक विशेष प्रकार का स्थायित्व लिए होती है | पीढ़ी–दर–पीढ़ी की परंपरा उसे परिष्कृत एवं परिभाषित करती चलती है | हिंदी, अंग्रेजी, तमिल, बंगला, पंजाबी, जर्मन, रुसी, फ्रेंच आदि सभी भाषाओं के संबंध में यही सत्य है | भाषाओं ही नहीं, उपभाषाओं – ब्रज, अवधी, भोजपुरी, हरियाणवी, राजस्थानी आदि की भी यही विशेषता है | प्रत्येक भाषा अपने भाषाई समाज में नैसर्गिक एवं अविच्छिन्न रूप में प्रवाहित होती है |

वैदिक साहित्य से तात्पर्य उस विपुल साहित्य से है जिसमें वेद संहिता, ब्राह्मण–ग्रंथ, आरण्यक, उपनिषद शामिल हैं। वर्तमान समय में वैदिक साहित्य ही हिंदू धर्म के प्राचीनतम स्वरूप पर प्रकाश डालने वाला तथा विश्व का प्राचीनतम स्रोत है। वैदिक साहित्य को 'श्रुति' कहा जाता है | क्योंकि ब्रह्मा ने विराट पुरुष परम ब्रह्म की वेद ध्वनि को सुनकर ही प्राप्त किया है। अन्य ऋषियों ने भी इस साहित्य को श्रवण परंपरा से ही ग्रहण किया था तथा आगे की पीढ़ियों में भी ये श्रवण परंपरा द्वारा ही स्थानांतरित किए गए। इस परंपरा को श्रुति परंपरा भी कहा जाता है तथा श्रुति परंपरा पर आधारित होने के कारण ही इसे श्रुति साहित्य भी कहा जाता है। वैदिक साहित्य के अंतर्गत वेद, उपनिषद, आरण्यक की भाषा संस्कृत है जिसे वैदिक संस्कृत कहा जाता है | संस्कृत शब्दों के प्रयोग और अर्थ कालांतर में बदल गए या लुप्त हो गए | ऐतिहासिक रूप से प्राचीन भारत और हिंदू आर्य जाति के बारे में इनको एक अच्छा संदर्भ माना जाता है। संस्कृत भाषा के प्राचीन रूप को लेकर भी इनका साहित्यिक महत्व बना हुआ है। रचना के अनुसार प्रत्येक शाखा की वैदिक शब्द–राशि के चार भाग हैं | "वेद के मुख्य मंत्र भाग को संहिता कहते हैं |"[2] इस विषय के विद्वानों में पर्याप्त मतभेद है कि वेदों की रचना कब हुई और उनमें किस काल की सभ्यता का वर्णन मिलता है |

पाणिनीय व्याकरण में मुनित्रय का उल्लेख मिलता है | इसमें तीन मुनि आते हैं – पाणिनि, कात्यायन, पतंजलि | पाणिनि विश्व के सबसे बड़े वैयाकरण हैं | पाणिनि का नाम भाषा शास्त्र के इतिहास में मूर्धन्य है | भारतीय एवं पाश्चात्य सभी भाषा शास्त्री इस विषय में एक मत हैं कि पाणिनि ने ही सर्वप्रथम भाषा शास्त्र की सर्वांगीण व्याख्या की | संस्कृत का जितना सूक्ष्म विवेचन किया है, उतना व्यापक अध्ययन विश्व की किसी भी भाषा का नहीं हुआ | पाणिनि का व्याकरण पाश्चात्य भाषा शास्त्रियों के लिए भी आदर्श ग्रंथ रहा है | पाणिनि ने भाषा शास्त्र के विभिन्न अंगों – ध्वनि विज्ञान, पद विज्ञान, वाक्य विज्ञान, अर्थ विज्ञान, तुलनात्मक व्याकरण को अग्रसर करने का कार्य किया | पाणिनि की सर्वोत्तम कृति 'अष्टाध्यायी' है | इसमें लौकिक संस्कृत के साथ–साथ वैदिक व्याकरण भी दिया गया है | इसमें संधि, कारक, कृत, तद्धित प्रत्यय, समास, सुबन्त और तिङन्त प्रकरण, प्रक्रियाएँ, परिभाषाएँ, द्विरुक्त आदि की जानकारी मिलती है |

पाणिनि के परवर्ती वैयाकरणों में कात्यायन का स्थान प्रथम स्थान पर लिया जाता है | कात्यायन ने 'अष्टाध्यायी' के सूत्रों पर वार्तिकों की रचना की | अष्टाध्यायी के सूत्रों में संशोधन एवं परिवर्तन किए गए उसे ही वार्तिक कहते हैं | परंतु पंतजलि के अनुसार कात्यायन दक्षिणात्य थे इनका दूसरा नाम वररुचि भी था | कात्यायन की प्रमुख रचना 'स्वर्गारोहण' है | कात्यायन ने भाषा संबंधी विकास का उल्लेख किया | पाणिनि के पश्चात नवीन शब्दों का उल्लेख किया। कात्यायन ने लोक व्यवहार को महत्ता दी। कात्यायन ने 'सर्वे देशान्तरे' वार्तिक में विभाषाओं में प्रयुक्त होने वाले शब्दों का उल्लेख किया। एक ही शब्द भिन्न–भिन्न भाषाओं में भिन्न–भिन्न अर्थ के हो जाते हैं इसका भी उल्लेख लिया। सार्थक शब्दों के प्रयोग एवं उनके कुछ–न–कुछ अर्थ होते हैं इसका भी उल्लेख लिया।

वहीं पतंजलि ने व्याकरण के दार्शनिक पक्ष की स्थापना की। उन्होंने स्फोट एवं ध्वनि सिद्धांतों की स्थापना की। शब्द और अर्थ के स्वरूप का निर्णय दिया। शब्द की नित्यता और अनित्यता का विशद विवेचन किया। भाषा शास्त्र में विभाषाओं का उदाहरण

सहित महत्व प्रस्तुत किया। 'सर्वे देशान्तरे' के द्वारा संस्कृत को विश्व भाषा के रूप में प्रस्तुत किया। विश्व की विभिन्न भाषाओं में स्थानीय अर्थ भेद का उल्लेख किया। भाषा के विभिन्न रूप, विभाषा, अपभ्रंश आदि का उल्लेख किया। प्रांतीय भेद से एक अर्थ में विभिन्न प्रांतीय प्रयोगों का उल्लेख किया। ध्वनि विज्ञान, निर्वचन, व्याकरण, दर्शनशास्त्र का एकत्र समन्वय प्रस्तुत किया। 'लोकतः' के द्वारा लोक व्यवहार एवं लोक प्रचलित भाषा के स्वरूप को साहित्यिक भाषा से अधिक प्रामाणिक स्वीकार किया। ध्वनि विज्ञान, पद विज्ञान, अर्थ विज्ञान के गूढ़ सिद्धांतों का स्पष्टीकरण भी दिया।

मध्यकालीन आर्य भाषाओं को तीन भागों में विभाजित किया गया; प्राचीन प्राकृत या पालि (500 ई. पू. से 100 ई. तक), मध्यकालीन प्राकृत (100 ई. से 500 ई. तक), परकालीन प्राकृत या अपभ्रंश (500 ई. से 1000 तक)। जन–व्यवहृत भाषा का साहित्यिक स्वरुप 'संस्कृत' को माना गया और बोलचाल की संस्कृत को प्राकृत कहा गया। भरतमुनि के अनुसार, संस्कृत भाषा के शब्दों का ही विकृत एवं परिवर्तित रूप प्राकृत भाषा है। "एतदेव विपर्यस्तं संस्कार–गुण–वर्जितम। विज्ञेयं प्राकृतं पाठयं नानावस्थान्तरात्मकम।।" आचार्य धम्मपाल ने 'पालि' शब्द का प्रयोग मूल त्रिपिटक के लिए किया। वहाँ से यह शब्द पालि भाषा के लिए आया। आचार्य विधुशेखर भट्टाचार्य ने 'पंक्ति' से पालि की उत्पत्ति मानी; पंक्ति–पंति–पत्ति–पल्लि–पालि। विभिन्न विद्वानों ने विभिन विचार दिए । अमरकोश के टीकाकार भानुजी दीक्षित ने 'पाल रक्षणे' से पालि शब्द की व्युत्पत्ति मानी है पाल+इ=पालि। पालि में द्विवचन नहीं होते, पालि में तीन लिंग होते हैं। शब्दरूपों में चतुर्थी और षष्ठी में रूप समान होते हैं। पालि में पाँच सौ से अधिक धातुएँ हैं, नौ गण हैं, क्रयादि के दो भेद हैं– ना और णा वाले। पालि में तद्भव शब्दों की अधिकता है। पालि में तत्सम और देशज शब्द कम हैं। पालि में आत्मनेपद लुप्त हो गया, परस्मैपद शेष रह गया।

मध्यकालीन प्राकृत को 'साहित्यिक प्राकृत' भी कहा जाता है। प्राकृत–व्याकरण के सबसे प्राचीन वैयाकरण वररुचि ने चार प्राकृत स्वीकारी हैं; शौरसेनी, महाराष्ट्री, मागधी, पैशाची। कहीं–कहीं पर मध्यकालीन प्राकृत के प्रांतीय एवं भौगोलिक भेद भी पाए जाते हैं जिनकी अधिक जानकारी उपलब्ध नहीं है। प्राकृत भी संस्कृत के समान श्लिष्ट योगात्मक भाषा है। संस्कृत व्याकरण को सरल बनाया गया। चतुर्थी विभक्ति का अभाव हो गया। प्रथमा और द्वितीया विभक्ति के बहुवचन प्रायः एक हो गए । कुछ प्राचीन ध्वनियों का अभाव हो गया जैसे कि; ऋ, ऐ, औ एवं व्यंजनों में य, श, ष, विसर्ग आदि।

मार्कन्डेय ने अपभ्रंश के तीन भाग स्वीकारे हैं; नागर, उपनागर, ब्राचड। नागर गुजरात की अपभ्रंश मानी गई, ब्राचड सिंध की और उपनागर इन दोनों के मध्य की। विभिन्न विद्वानों के मतों की समीक्षा करें तो, प्राचीन प्राकृत और वर्तमान भारतीय भाषाओं को मिलाने वाली कड़ी अपभ्रंश भाषाएँ हैं। इसमें द्विवचन का अभाव है। इसमें धातुरूपों में आत्मनेपद का अभाव है। इसमें द्रविड़ एवं विदेशी भाषाओं के शब्द बड़ी मात्रा में आ गए । वाक्यों में पदक्रम को निश्चितता मिली। इसमें विभक्ति लोप जन्य अस्पष्टता कुछ सीमा तक कम हो गई। नपुंसक लिंग शब्द समाप्त हो गए । श एवं ष का लोप हो गया। शब्द रूप एवं धातु रूप कम हो गए । अकारांत पुल्लिंग शब्दों के तुल्य अधिकांश शब्द रूप चलने लगे।

भाषा विज्ञान एवं व्याकरण दोनों ही एक–दूसरे के इतने अधिक निकट हैं कि कभी–कभी दोनों को एक या भाषा विज्ञान को व्याकरण तथा व्याकरण को भाषा विज्ञान मानने का भ्रम लोगों को हो जाता है। जबकि दोनों अलग–अलग हैं। व्याकरण को हम शास्त्र कह सकते हैं जो इस बात के निर्देश पर अधिक बल देता है कि भाषा में कहाँ, कैसा प्रयोग होना चाहिए, कैसा प्रयोग शुद्ध है और कैसा अशुद्ध । इसके विपरित, भाषा विज्ञान एक विज्ञान है। जिसका संबंध इस आदर्श से नहीं है कि कहाँ, कैसा प्रयोग होना चाहिए । वह तो केवल इस बात को जानना चाहता है कि कब, कहाँ कैसा प्रयोग होता है। व्याकरण विवरण और वर्णन प्रधान है तो भाषा विज्ञान विवेचन एवं विश्लेषण प्रधान है। व्याकरण केवल व्याकरण के रूप आदि देकर चुप हो जाता है, जबकि भाषा विज्ञान और गहराई में जाकर यह भी पता लगाता है कि वह रूप क्या है, कहाँ से आया है, कितना पुराना है, आदि। उदाहरणस्वरुप, व्याकरण यह कह कर चुप हो जाएगा कि 'जा(ना)' का भूतकाल का रूप 'गया' होता है। किंतु, भाषा विज्ञान और गहराई में जाकर यह खोजता है कि मूलतः 'गया' का 'जा' से कोई संबंध नहीं है। संस्कृत में 'गम' और 'या' दो धातुएँ थीं। 'या' से 'जा' का विकास हुआ जिससे जाता, जाना, जाये, जाया आदि रूप बनते हैं। 'गम' से हिंदी में केवल एक ही रूप आया–'गया'। अकेला रूप होने के कारण इसके लिए अलग धातु की कल्पना नहीं की गई और इसे भी 'जा' का ही रूप मान लिया गया। इस तरह भाषा विज्ञान व्याकरण का भी व्याकरण है। जहाँ तक संबंधों का प्रश्न है, भाषा के अध्ययन में दोनों एक–दूसरे के पूरक तो हैं ही, अन्योन्याश्रित भी हैं। बिना भाषा विज्ञान की जानकारी के अच्छा व्याकरण नहीं लिखा जा सकता और दूसरी ओर भाषाओं के विश्लेषण में भाषा विज्ञान व्याकरण से पर्याप्त सामग्री और सहायता लेता है। उदाहरण के लिए, व्याकरण का संधि–प्रकरण पूर्णरूपेण भाषा विज्ञान पर आधारित है। दूसरी ओर भाषा विज्ञान अपनी प्रमुख शाखा रूप विज्ञान तथा वाक्य विज्ञान की सारी की सारी मूलभूत सामग्री व्याकरण से ही लेता है।

"भाषा विज्ञान भाषा के अध्ययन के लिए सारी सामग्री साहित्य से ही लेता है। यदि आज संस्कृत, अवेस्ता या ग्रीक साहित्य सामने न होता तो किस आधार पर भाषा विज्ञान कह पाता या जान पाता कि तीनों भाषाएँ किसी एक मूल भाषा से निकली हैं।"[3] इसी प्रकार यदि आदिकाल से आधुनिक काल तक का हिंदी साहित्य हमारे सामने न होता, तो भाषा विज्ञान हिंदी भाषा के ऐतिहासिक विकास का अध्ययन किस प्रकार कर पाता। इस प्रकार हम देखते हैं कि भाषा के तुलनात्मक और ऐतिहासिक दोनों ही अध्ययनों में भाषा विज्ञान को साहित्य की सहायता लेनी पड़ती है। सत्य तो यह है कि केवल जीवित भाषाओं के अध्ययन को छोड़कर पुरानी या मृत भाषा का, भाषा विज्ञान चाहे जिस रूप में अध्ययन करना चाहे, उसे पग–पग पर साहित्य की सहायता लेनी पड़ेगी और जीवित भाषा के संबंध में भी; क्यों, 'कब', 'कैसे' आदि के उत्तर के लिए उसे साहित्य की ही छानबीन करनी पड़ेगी। जीवित भाषा यह सूचित कर देगी कि भोजपुरी में 'बाटे' शब्द हैं, पर यहाँ कहाँ से आया, इसके लिए भाषा विज्ञान संस्कृत साहित्य को छानेगा और तब कह सकेगा कि इसका मूल संस्कृत रूप 'वर्तते' है, या बुंदेलखंड के नटखट लड़कों से। "ओना मसि धम, बाप पढ़ न हम।" सुनकर जब भाषा विज्ञान का कान खड़ा होगा कि यह 'ओना मासी धम' क्या बला है तो प्राचीन साहित्य का अध्ययन ही उसे बतलाएगा कि शाकटायन के प्रथम सूत्र 'ॐ नमः सिद्धम' का ही बिगड़ा रूप है। दूसरी ओर साहित्य भी भाषा विज्ञान से कम सहायता नहीं लेता। भाषा विज्ञान उसके क्लिष्ट अर्थों एवं विचित्र प्रयोगों तथा उच्चारण–संबंधी समस्याओं पर प्रकाश डालता है। डॉ. वासुदेव शरण अग्रवाल ने भाषा विज्ञान के सिद्धांतों के आधार पर जायसी कृत 'पद्मावत' के बहुत से शब्दों को उनके मूल रूपों से जोड़कर उनके अर्थों को स्पष्ट किया है, साथ ही शुद्ध पाठ के निर्धारण में भी इससे पर्याप्त सहायता ली हैद्य इस प्रकार साहित्य और भाषा विज्ञान दोनों एक–दूसरे के सहायक हैं।

संस्कृत–इतर भारतीय भाषाओं में सिंधी, पंजाबी, लहंदा, पहाड़ी, गुजराती, राजस्थानी, पूर्वी हिंदी, पश्चिमी हिंदी, बिहारी, बंगाली,

असमी, उड़िया, मराठी, तमिल, तेलुगु, कन्नड, आदि भाषाएँ आती हैं। ये भाषाएँ आर्यभाषा परिवार एवं द्रविड़ भाषा परिवार में विभाजित की गईं हैं। इनमें से कुछ भाषाओं को आधुनिक भारतीय आर्यभाषा भी कहा जाता है।

यदि हम गुजराती, राजस्थानी, पश्चिमी हिंदी की बात करें तो गुजराती गुजरात, काठियावाड़, बड़ोदा, कच्छ में बोली जाती है। राजस्थानी और पश्चिमी हिंदी से गुजराती का बहुत अधिक साम्य है। राजस्थानी का विकास शौरसेनी के नागर अपभ्रंश के पूर्वोत्तर रूप में हुआ। वहीं पश्चिमी हिंदी भी शौरसेनी अपभ्रंश से विकसित हुई। यह वर्तमान में खडी बोली हिंदी के नाम से प्रसिद्ध है। परंतु, गुजराती, राजस्थानी, पश्चिमी हिंदी आदि अंतरंग भाषाओं में अल्पप्राण और महाप्राण का अभेद मिलता है। जैसे कि; वेश=भेस, विभूति=भभूति, आदि।

यदि हम सिंधी व लहंदा, मराठी व बांगला की बात करें तो, सिंधी का प्रचलन पाकिस्तान में तथा भारत के कच्छ, अजमेर, मुंबई, दिल्ली में है। सिंधी का विकास ब्राचड अपभ्रंश से हुआ। वहीं लहंदा पाकिस्तान के पश्चिमी पंजाब प्रदेश की भाषा है और पैशाची। "लहंदा को 'पश्चिमी पंजाबी' नाम से जाना जाता है।"[4] बंगाली व मराठी की बात करें तो भारत के बंगाल प्रदेश तथा बांग्लादेश में बंगाली बोली जाती है। यह मागधी अपभ्रंश के पूर्वी रूप से उत्पन्न हुई। वहीं मराठी महाराष्ट्र प्रांत की भाषा है। मराठी अपभ्रंश से निकली है। सिंधी और लहंदा भाषा में 'स' का 'ह' हो जाता है। मराठी व बांग्ला में 'श' हो जाता है। अंतरंग भाषाओं में भी 'स' का 'ह' या 'श' हो जाता है। जैसे कि; केसरी=केहरी, तस्य=ताहि, द्वादश=बारह, आदि। उदाहरणस्वरुप, संस्कृत, अपभ्रंश, राजस्थानी की तुलना करें तो; संस्कृत का 'कर्म' अपभ्रंश में 'कम्म' और राजस्थानी में 'काम' हो जाता है। संस्कृत का 'कार्य' अपभ्रंश में 'कज्ज' और राजस्थानी में 'काज' हो जाता है।[5]

निष्कर्ष

समग्रतः कहा जा सकता है कि भारतीय भाषा विज्ञान अत्यंत समृद्ध विज्ञान है। जिसके अनके छोर हैं और जिसका गहनता से अवलोकन करना नितांत आवश्यक है। भाषा विज्ञान एक चिरकालिक परंपरा का निर्वहन भलीभांति करता है। यह एक चिरकालिक संवाद की परंपरा को आधुनिकता से जोड़ने का कार्य करती है। बिना भाषा के संवाद नहीं किया जा सकता। हर कालखंड में भाषा में कुछ नए तथ्यों का समावेश हुआ है और कुछ पुराने तथ्य पीछे छूट गए, इसे समय की माँग भी कहा जा सकता है। वेद, पुराण, उपनिषद से लेकर इक्कीसवीं सदी तक जितनी भी रचनाएँ हुईं हैं वे सब भाषा विज्ञान से किसी–न–किसी स्वरुप में जुड़ी हुईं हैं। भाषा विज्ञान भूत, वर्तमान और भविष्य को जोड़ने वाली महत्वपूर्ण कड़ी है। संस्कृत से लेकर आधुनिक शब्दावली सब भाषा विज्ञान से जुड़े हुए हैं।

संदर्भ ग्रंथ

1. अग्रवाल, मुकेश, भाषा–विज्ञान एवं हिंदी भाषा, स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ.10
2. शर्मा, देवेंद्रनाथ, 2001, भाषा विज्ञान की भूमिका, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, पृ.27
3. सिंह, विनम्रसेन, 2017, भाषा विज्ञान तथा हिंदी भाषा, शिवांक प्रकाशन, दिल्ली, पृ. 49
4. ठाकवाणी, पीताम्बर, 2020, आधुनिक भाषा विज्ञान और हिंदी भाषा, सैन्टो पब्लिकेशन्स, नोएडा, पृ. 66
5. तिवारी, भोलानाथ, 2027, भाषा विज्ञान, किताबमहल, इलाहाबाद, पृ.101